International Journal of Applied Research 2015; 1(3): 106-108

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 3.4
IJAR 2015; 1(3): 106-108
www.allresearchjournal.com
Received: 23-01-2015
Accepted: 25-02-2015

Om Prakash
Research Scholar,
Jamia Millia islamia New Delhi-25

Correspondence:
Om Prakash
Research Scholar,
Jamia Millia islamia New Delhi-25

बौद्ध विहारों का आपस में सम्बन्ध एवं ब्राह्मण धर्म

Om Prakash

भगवान बुद्ध के जीवन काल में ही बौद्ध विहारों की स्थापना हो गयी थी। ये बौद्ध विहार पूर्व मध्य काल अर्थात् लगभग 600ई. से 1200ई. तक अपने उन्नति के चरम पर पहुँच गये थे। ये बौद्ध विहार शिक्षा, संस्कृति, धर्म तथा ज्ञान-विज्ञान के विकास के रूप में पुष्पित एवं पल्लवित हो रहे थे। इन विहारों के आपस में सम्बन्ध थे इसके अलावा ये समाज से भी जुड़े हुए थे। इतिहासकारों की मान्यता है कि बौद्ध धर्म तथा संस्कृति का उद्भव वैदिक धर्म के कर्मकाण्डों तथा जटिलता के विरोध स्वरूप हुआ था लेकिन पूर्व मध्यकाल तक आते-आते बौद्ध धर्म एवं ब्राह्मण धर्म एक-दूसरे के निकट आ गए। ये दोनों धर्म एक-दूसरे के धार्मिक तत्त्वों को आत्मसात् कर रहे थे। भारतीय उपमहाद्वीप में अनेक संस्कृतियों एवं धर्मों का उदय हुआ, जिसने न केवल भारत अपितु पूरे विश्व को अपने प्रकाश से आलोकित किया।

बौद्ध धर्म न केवल मानव के कल्याण हेतु कार्य किया वरन् समस्त प्राणी जगत के कल्याण के निमित्त आन्दोलन चलाया। यह बहुत ही सरल धर्म था जो कि तत्कालीन ब्राह्मण धर्म की जटिलता का विकल्प प्रस्तुत किया था। बौद्ध धर्म एवं संस्कृति के प्रचार-प्रसार में ये बौद्ध विहार एक उल्लेखनीय भूमिका निभाये। ये देश के बाहर विशेष रूप से चीन कोरिया तथा दक्षिण-पूर्वी एशिया में भारतीय संस्कृति का प्रचार-प्रसार किये।

पूर्व मध्यकाल में अध्ययनोपरान्त यह सिद्ध होता है कि प्रमुख विहारों और अन्य विहारों के बीच में सम्बन्ध थे। बोधिगया के 10वी. शताब्दी के एक अभिलेख[1] में हमें यह देखने को मिलता है कि सोमपुर बिहार के एक भिक्षु स्थाविर वीरेन्द्र बुद्ध की मूर्ति को बोधिगया में दान दिया। वीरेन्द्र समतट का वासी था किन्तु सोमपुर के बिहार में रहता था और महायान धर्म का अनुयायी था। एक और अभिलेख में हमें ये देखने को मिलता है[1] कि नालंदा और सोमपुर में संबंध थे। यह अभिलेख नालंदा से मिला है और एक बौद्ध भिक्षु विपुल श्री मित्र का है। विपुल श्री मित्र सोमपुर का भिक्षु था और उसके गुरु का नाम करूणा श्रीमित्र का यह अभिलेख हमें बताता है। कि उसके गुरु की मृत्यु तब हुई जब बंगाल की सेना ने गुरु के घर को जला दिया। इस अभिलेख लिखा है कि कई वस्तुएं दान दी गयी। जिसमें इस अभिलेख में कई वस्तुएं हाथ से लिखी हुई हैं। प्रज्ञा-पारमिता खासरपण का मंदिर- गौतम बुद्ध के लिए एक चोयण्डक पितामह (बुद्ध) के लिए एक बौद्ध विहार, हर्षपुर में जिन (बुद्ध) एक मूर्ति और सोपुर में तारा का एक मंदिर आदि संभवत: बारहवीं शदी में सोमपुर के भिक्षुओं ने नालंदा में शरण ली थी। यह समय बौद्ध धर्म के ह्रास का था और छोटे विहारों को बड़े विहारों की आवश्यकता पड़ी।

सबसे महत्वपूर्ण संबंध हमें विहारों में दक्षिण पूर्वी एशिया के साथ मिलते हैं। नालंदा के दक्षिण पूर्वी एशिया के साथ घनिष्ठ संबंध थे।

देवपाल के काल में नालंदा के ताम्रपत्र अभिलेख के विषय में पहले भी इस अध्याय में बताया जा चुका है। इस अभिलेख से यह पता चलता है कि सुमात्रा के राज बलपुत्र ने देवपाल से नालंदा में एक बौद्ध विहार एवं उसकी देखभाल के लिए कुछ गाँव के दान का अनुरोध किया था। देव पाल ने इस अनुरोध का पालन किया और अनुदानित गाँव को कर रहित कर दिया। इन विहारों में भिक्षुओं की देखभाल के लिए गांव के कृषि उत्पादन से आय उपलब्ध कराया गया। इस अभिलेख में यह बताया गया है कि इन विहारों में भिक्षु,

बौद्ध दार्शनिक ग्रन्थ लिखते थे और इन दान दिये गये गांवों में चाट और भाट का प्रवेश वर्जित था।

नालंदा के इस ताम्रपत्र अभिलेख[3] में राजा बलपुत्र और शैलेन्द्र वंश के इतिहास का वर्णन है। शैलेन्द्र वंश के सम्बंध दक्षिण भारत के चोल शासकों के साथ भी थे। चोल राजा राजाराज, राजकेशरी वर्मन (985-1013 ई॰) के लाइडेन के 21 ताम्रपत्र अभिलेखों में उल्लेख मिलता है कि शैलेन्द्र वंश के राजा मारविजयोत्तुंग वर्मन ने तमिल क्षेत्र के बंदरगाह नागपट्टन में एक विहार बनाए जाने का आग्रह चोल राजा से किया था। चोल राजा राज ने इस आग्रह को स्वीकार किया, और विहार बनवाया तथा उसके लिए कई गांव दान किए। यह पहले बताये गये नालंदा विहार की तरह है। इस अभिलेख से हमें यहज्ञात होता है कि पाल राजाओं और सुमात्रा के शैलेन्द्र वंश के राजाओं के संबंध व्यापारिक और शान्तिपूर्ण थे। ताम्रलिप्ति की समुद्री व्यापार में भूमिका महत्वपूर्ण है। इस व्यापार से दक्षिण पूर्वी एशिया और बंगाल के सम्बन्ध और धनिष्ठ हुए। इन व्यापारिक मार्गों में धार्मिक विचारों के प्रचारक भिक्षुओं का आना जाना था, जिसमें दोनों देशों के बौद्ध भिक्षु शामिल थे।

बोधिगया के भी दक्षिण-पूर्वी एशिया के साथ सम्बध थे। ये संबंध गुप्त काल में 6ठी शताब्दी से ही स्थापित थे। बोधिगया के 587 ई॰ के एक अभिलेख में यह बताया गया है कि श्री लंका में महानाम नामक एक बौद्ध भिक्षु आये और यहां पर एक विहार की स्थाना की।[4]

ये विहार तीर्थ यात्रा के केन्द्र भी बन गये थे। बहुत सारे बौद्ध तीर्थ यात्री इन विहारों में आते थे। चीनी यात्री, जैसे फाह्यान, ह्वेनसाँग इत्सिंग आदि आये और इन विहारों में निवास किये। 1022 ई॰ में शुंग वंश के समय में एक चीनी बौद्ध भिक्षु बोधिगया आया और यहाँ पर पत्थर का एक पगोडा बनवाया। इसी अभिलेख से हमें यह पता चला है कि इत्सिंग और आई-लिन एक स्वर्ण बक्से में एक काषाय वस्त्र लाये थे और उसे बोधिगया के बोधिवृक्ष पर डाल दिया।[5] इस अभिलेख से हमें यह पता चलता है कि बोधिगया का महत्व विश्व स्तर पर था। केवल बोधिगया ही नहीं अपितु अन्य ऐसे और भी विहार तीर्थ यात्रा के प्रमुख केन्द्र बन चुके थे।[6] इत्सिंग के लेख से हमें यह पता चलता है कि वह चीन से ताम्रलिपि में 673 ई॰ में आया था वहाँ पर 5 महीने रहा और अपने साथियों के साथ नालंदा और फिर बोधिगया गया। वहाँ से श्रीभोज गया और फिर 693 ई॰ में चीन वापस लौट गया। इत्सिंग के इस यात्रा से बौद्ध तीर्थ स्थानों के महत्व का पता चलता है जिसमें नालंदा और बोधिगया भी है।[7] चीन, कोरिया और अन्य दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशों से केवल भिक्षु ही नहीं, अपितु आम बौद्ध उपासक भी नालंदा एवं बोधिगया आते थे।[8]

अभिलेखों से विदित होता है कि ब्राह्मण और बौद्ध धर्म दोनों एक दूसरे के धार्मिक तत्वों को आत्मसात कर रहे थे। उदाहरण स्वरूप बौद्ध धम्मचक्र तथा विष्णु के सुदर्शन चक्र के बीच समानताएं दर्शायी गयी हैं। ब्राह्मण बौद्ध विहारों के दिन प्रतिदिन के गतिविधियों के नियामक थे। यह धार्मिक आदान-प्रदान की प्रक्रिया छठी शताब्दी में तीव्र रूप से उभर कर सामने आती है जब भगवान बुद्ध को विष्णु का अवतार मान लिया गया। ऐसी संभावना प्रकट की जाती है कि बौद्ध धर्म उस समय बहुत लोकप्रिय था। जिससे वैष्णव धर्म, बौद्ध धर्म के तत्वों को अपनाकर लोगों के बीच लोकप्रियता प्राप्त करने का प्रयास कर रहा था। जिसकी चर्चा छठी शताब्दी के मल्लासरूल अभिलेख में है। यह आदान-प्रदान दसवीं शताब्दी में भी जारी था। 10वी. शताब्दी का एक अभिलेख इस प्रक्रिया को विहारों में भी दर्शाता है और इस विहार को लोगों से जोड़ता है।

इस अभिलेख में यह भी उल्लिखित है कि मुनियों ओर यतियों की देखभाल लोगों को ही करना है। इससे यह स्पष्ट होता है कि विहारों की गतिविधियों में ब्राह्मणों का योगदान था और विहार जनता से भी जुड़े हुए थे। इस अभिलेख से हमें यह पता चलता है कि गया के मंदिर से यह जुड़ा हुआ था या बाद में इस मंदिर का निर्माण 'वास' पर हुआ। इस विहार से, भिक्षुओं के रहने के नियमों का भी पता चलता है। पंक्ति 11 में यह बताया गया है कि इस 'वास' में 'व्रतचारिन' तपो धनजन, जो रोग-ग्रस्त और पंगु नहीं थे केवल वही यहाँ रह सकते थे। आगे इसी पंक्ति में यह भी बताया गया है कि गया के ब्राह्मणों का यह कर्तव्य था कि नियम का पालन हो।[9] इसका वे ध्यान रखें।

अत: हम देखते हैं कि इस समय ब्राह्मण और बौद्ध धर्म के बीच धार्मिक मान्यताओं का आदान-प्रदान हो रहा था। इस आदान-प्रदान से बौद्ध धर्म के ह्रास को बल मिला या नहीं इसकी चर्चा हम अगले अध्याय में करेंगे।

एक अभिलेख में बताया गया है कि वीर देव नामक एक कुलीन ब्राह्मण वेद और शास्त्रों का अध्ययन करके भगवान बुद्ध की शिक्षाओं को ग्रहण करना चाहता था अत: वह कनिष्क विहार गया (जो वर्तमान पेशावर में है और वहाँ बौद्ध धर्म को अपनाया।) वहां से वह बोधिगया आया और एक विहार यशोवर्मापुर में रहा। देवपाल ने उसकी सहायता की। इस अभिलेख (9वी.-10वी. शदी ई॰) से हमें यह पता चलता है कि उसने दो चैत्य बनवाये और बौद्ध संघ का प्रमुख बना। वह नालंदा का भी उपाध्याय था।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि पूर्व मध्यकाल में बौद्ध धर्म एवं ब्राह्मण धर्म एक-दूसरे की परम्पराओं को अपना रहे थे। ब्राह्मण धर्म को ब्राह्मण बौद्ध धर्म को अपना रहे थे और विहारों के क्रियाकलाप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। विहार इस समय बौद्ध धर्म के प्रमुख केन्द्र बन चुके थे और बौद्ध धर्म के गतिविधियों का नियण्तरण कर रहे थे।

इन विहारों की गतिविधियाँ समाज की गतिविधियों को प्रभावित करती थी इस समय समाज में ब्राह्मण धर्म का प्रभाव बढ़ रहा था और उसका प्रभाव विहारों पर भी पड़ा। इसी प्रकार से विहार स्वयं को लोगों के लिए आकर्षण का केन्द्र बने और जब 12 वी.-13वी. शताब्दी में ऐसा नहीं कर पाये तो वे कमजोर हो गये।[10] अत: हम देखते हैं कि ब्राह्मण और बौद्ध दोनों धर्मों के रीति-रिवाज तथा परम्पराओं को ग्रहण करने की प्रक्रिया पाल शासकों के काल में क्रियाशील थी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सरकार, डी॰ सी॰; सेलेक्ट इन्सिक्रिप्शन, वौलूम-11, बोधिगया बुद्ध इमेज इन्स्क्रिपसन ऑफ वीरेन्द्र, अभि॰ सं॰-13, पृ॰ 59
2. सरकार, डी॰ सी॰; सेलेक्ट इन्सिक्रिप्शन, वौलूम-11, नालंदा स्टोन, इन्सिक्रिप्शन ऑफ विपुलश्री मित्र, अभि॰ सं॰ 14, पृ॰ 60
3. एपी॰ इ॰; ख॰ 17, अभिलेख सं॰ 17, पृ॰ 310

4. सरकार, डी॰ सी॰; सेलेक्ट इन्स्क्रिपशन, वौलूम-11, अभि॰ सं॰ 12 महानाम का बोधिगया अभिलेख, पृ॰ 56
5. दि इण्डियन एन्टीक्वेरी; वोलूम 10, 1872-1933, पृ॰ 192-193
6. वही, पृ॰ 193
7. वही, पृ॰ 194-197
8. दि इण्डियन, एन्टीक्वेरी; वोल्यूम (10), (1872-1933), पृ॰ 246-248
9. एपी॰ इ॰; खण्ड 35, अभि॰ सं. 32 (1) नारायण-पाल का गया अभिलेख, पृ॰ 225
10. चक्रवर्ती, कुनाल, रिलीजियस प्रोसेस, 2000, पृ॰ 143 यादव, बी. एन.एस. पृ॰ 345-346